एग्री आर्टिकल्स
(कृषि लेखों के लिए ई-पत्रिका)
वर्ष: 03, अंक: 01 (जनवरी-फरवरी, 2023)
www.agriarticles.com पर ऑनलाइन उपलब्ध
© एग्री आर्टिकल्स, आई. एस. एस. एन.: 2582-9882

खड़ीन-मृदा में जल संरक्षण तकनीक

(*शिव पाल सिंह[1], आर. पी. शर्मा[1], आर. एस. मीणा[2], के. के. यादव[3], बंशी लाल जाट[1], एन. आर. ओला[1] एवं राजवीर चौधरी[4])

[1]भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो -क्षेत्रीय केन्द्र, उदयपुर

[2]भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो -क्षेत्रीय केन्द्र, जोरहाट

[3]राजस्थान कृषि, महाविद्यालय महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर

[4]कृषि विज्ञान केन्द्र, जैसलमेर

*संवादी लेखक का ईमेल पता: shiv.singh8@icar.gov.in

पश्चिमी राजस्थान के पारंपरिक जल प्रबंधनों की गुण–गाथा तब तक पूरी नहीं होगी जब तक हम खड़ीनों की चर्चा न कर लें। जल संरक्षण की पारम्परिक विधियों में बहुत पुरानी और वैज्ञानिक बहुउद्देशीय व्यवस्था है। शुष्क क्षेत्र के वैज्ञानिकों का मानना है कि इनकी आज भी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। खड़ीन या धोरा की तकनीक 15वीं सदी में जैसलमेर के पालीवाल ब्राह्मणों ने विकसित की थी। दरबार उन्हें जमीन देते थे और खड़ीनें विकसित करने को कहते थे। जमीन राजा की रहती थी और उपज का एक–चौथाई हिस्सा उन्हें जाता था। इस प्रकार पालीवाल ब्राह्मणों ने पूरे जैसलमेर में खड़ीनें बनाई थी। आज भी करीब 100–150 छोटी–बड़ी खडीनें यहाँ है और इनसे लगभग 10000 हेक्टेयर भूमि सिंचित होती है। यह प्रणाली प्राचीन उर (वर्तमान इराक) के लोगों के सिंचाई के तरीकों से काफी मिलती–जुलती है।

खड़ीन एक पारंपरिक कृषि प्रणाली है जो मुख्य रूप से भारत और पाकिस्तान के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में प्रचलित है। खड़ीन खेत के किनारे सिध्द–पाल बांधकर वर्षा जल को कृषि भूमि पर संग्रह करने तथा इस प्रकार संग्रहीत जल से कृषि भूमि में प्रयाप्त नमी बचाकर फसल उत्पादन करने की एक परम्परागत तकनीक है। खड़ीन प्रणाली का एक प्रमुख लाभ यह है कि यह जल के संरक्षण और मृदा के कटाव को रोकने में मदद करती है। समोच्च बाँध जल के प्रवाह को धीमा कर देते है और इसे मृदा में रिसने देते हैं, जिससे फसल की वृद्धि के लिए उपलब्ध पानी की मात्रा बढ़ जाती है। यह प्रणाली मृदा की नमी को बनाए रखने में भी मदद करती है, जो उन क्षेत्रों में महत्वपूर्ण है जहां वर्षा कम होती है।

खड़ीन मिट्टी का एक बड़ा बांध है जो किसी ढलान वाली जमीन के नीचे बनाया जाता है जिससे ढलान पर बहकर नीचे आने वाला जल रुक सके। इसके दो तरफ मिट्टी की पाल/मेड़ बाँधकर पत्थर की मजबूत चादर लगाई जाती है। खड़ीन की यह पाल धोरा कहलाती है। इन खडीनों के पास कुआँ भी बनाया जा सकता है, जिसमें खड़ीन से रिसकर जल आता रहता है, जिसका उपयोग पेयजल के रूप में किया जा सकता है। अक्सर यह 1.5 मीटर से 3.5 मीटर तक ऊंची होती है। जमीन की बनावट के हिसाब से इनकी लंबाई 100 से 300 मीटर तक होती हैं। इससे घिरी जमीन की नमी ही नहीं बढ़ती, बरसाती जल के प्रवाह को रोककर यह

उपजाऊ मृदा के बहाव को भी रोकती है। खड़ीन में कई दिनों तक पानी भरा रहता है जिससे उसमें नमी जमीन में ही संरक्षित रहती है। खड़ीनों को इस तरह से डिजाइन किया हुआ है जिसके चलते बरसात का पानी उसमें स्वतः ही भर जाता है और अतिरिक्त पानी को ऊपर से निकल जाने दिया जाता है। जमीन में नमी होने के बाद उसमें बुवाई करके छोड़ दिया जाता है। किसी भी तरह के कीटनाशक आदि की जरूरत नहीं पड़ती। हालांकि कभी कभार ही कीट या लट लगने की आशंका रहती है।

खड़ीनें ऐसी कंकरीली और चट्टानी जमीन को भी खेती लायक बना देती है जो आमतौर पर सिर्फ पशुओं की चराई के लिए ही प्रयोग होती है। जल को निचले मैदानी इलाके में एकत्रित होने दिया जाता है, जहां जल की मात्रा के हिसाब से एक या दो फसलें ली जाती है। जब कम वर्षा हो तो सिर्फ खरीफ की फसल ही ली जाती है। वर्षा अच्छी हो तो रबी की फसल भी उसी जमीन पर उगा ली जाती है। यह प्रणाली सबसे शुष्क इलाके में भी किसानों को कम–से–कम एक फसल तो दे ही देती है।

इस पध्दति में जल को बनाए रखने और मृदा की उर्वरता में सुधार करने के लिए समोच्च बाँध और सीढ़ीदार खेत का उपयोग शामिल है, जिससे कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी फसलों की खेती की जा सकती है।

इन लाभों के बावजूद, कई क्षेत्रों में खड़ीन प्रणाली का कार्यान्वयन सीमित रहा है। मुख्य चुनौतियों में से एक यह है कि बांध और छतों के निर्माण और रखरखाव के लिए काफी मात्रा में श्रम की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त, किसान इसके लाभों और उचित कार्यान्वयन पर जानकारी या प्रशिक्षण की कमी के कारण प्रणाली को अपनाने में हिचकिचा सकते हैं।

नमी को जमीन में संरक्षित कर उस पर खेती करने की व्यवस्था खड़ीन खेती परंपरा है। पूरे देश में यह परंपरा सिर्फ जैसलमेर में है। हालांकि अब नमी को संरक्षित कर खेती करने के प्रयास अन्य जगहों पर भी चल रहे हैं लेकिन पारंपरिक रूप से यह खेती सिर्फ जैसलमेर में होती है। गौरतलब है कि जैसलमेर में आम तौर पर वर्षा बहुत कम होती थी। जिसके चलते यहां के लोग अपने गांव में एक जगह पर बरसाती पानी का संग्रहण करते और उसके बाद उस पर खेती की जाती। यहां से होने वाली खेती पर पूरा गांव निर्भर रहता था। नहरी पानी आने, बारिश बढ़ने व अन्य बारानी खेती भी होने के बावजूद यहां के लोगों ने खड़ीन की खेती को बंद नहीं किया है।

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान(काजरी), जोधपुर और कृषि विज्ञान केन्द्र, जैसलमेर ने भी खड़ीन को लेकर प्रोजेक्ट तैयार किया है। राष्ट्रीय कृषि विकास योजना के तहत शामिल इस प्रोजेक्ट में शुरूआती दौर में चने व गेहूं के अलग अलग किस्म के बीज बोए गए। अब तक सिर्फ देसी चने की खेती ही खड़ीनों में होती थी।

इन खड़ीनों में चने व गेहूं की फसल बोई जाती है। कई खड़ीन 100 से लेकर 500 बीघा तक के हैं। वर्षा ऋतू में खड़ीन में पानी संग्रहण होता है और उसके बाद पानी सूखने का इंतजार किया जाता है। आम तौर पर नवरात्रि(सितम्बर–अक्टूबर) पर पानी सूख जाता है, यदि नहीं सूखता है तो उस पानी को वहां से निकाल दिया जाता है। इस दौरान खड़ीन में चने व गेहूं के बीज बोए जाते हैं।

खड़ीन की खेती में न तो बहुत निराई– गुड़ाई की जरूरत होती है, न रासायनिक खाद और कीटनाशकों की। फिर भी बाजरा की पैदावार प्रति हेक्टेयर 3 से 5 क्विंटल तक हो जाती है। अच्छी बरसात हो और पर्याप्त पानी जमा हो जाए तो गेहूं की फसल प्रति हेक्टेयर 20 से 30 क्विंटल और चने की फसल प्रति हेक्टेयर 15 से 25 क्विंटल तक हो जाती है। राजस्थान नहर से सिंचित खेतों की पैदावार की तुलना में यह पैदावार भले ही कम दिखे, पर यह भी याद रखना जरूरी है कि यह फसल बिना ज्यादा परिश्रम, ज्यादा खर्च और पारम्परिक व्यवस्थाओं में हो जाती है और इतने मुश्किल क्षेत्रों में भी फसल उत्पादन का भरोसा रहता है। खड़ीन खेती में आर्गेनिक फसल होती है और इसके बारे में देश भर के किसानों को जानकारी होनी चाहिए।

स्वयंसेवी संगठनों ने भी इधर खड़ीनें बनवाने का काम शुरू किया है। ग्रामीण विकास विज्ञान समिति ने जोधपुर जिले में भी गरीब किसानों की जमीन पर 86 खड़ीनें बनवाई हैं। अपने इस काम के मूल्यांकन में समिति का मानना है कि खड़ीनों से उत्पादकता निश्चित रूप से बढ़ी है। सूखे के समय चारे की उपलब्धता भी एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। समिति ने यह भी पाया कि तकनीक के स्तर पर भले ही खड़ीनें कितनी भी अद्भुत क्यों न हों, इससे भूतल के जल के समान वितरण को निश्चित रूप से बढ़ावा नहीं मिलता। खड़ीन से किसको लाभ होगा यह प्राकृतिक बनावट और खड़ीन के अंदर आने वाली जमीन के संयोग पर ही बहुत हद तक निर्भर करता है। जिस आदमी का खेत खड़ीन में या

उसके पास होगा, उसको दूर वाले खेत के मालिक से ज्यादा लाभ मिलेगा ही। इससे किसानों में असमानता पैदा होती है। पहले संयुक्त परिवारों के चलते जमीन बिखरी और बंटी नहीं थी। अक्सर खड़ीन वाली जमीन एक या दो परिवारों की होती थी, पर परिवार बिखरने से आज विवाद बहुत आम हो गए हैं। आज अधिकांश खड़ीनों की पैदावार में समान बंटवारा नहीं होता। सिर्फ भराव क्षेत्र का रखरखाव सामूहिक तौर पर होता है और खेतों की रखवाली होती है। आगे चलकर गैर–बराबरी ज्यादा बड़े विवाद का कारण बन सकती है, खास तौर से खड़ीन के अंदर और दूर वाले खेतों के मालिकों के बीच। इससे सामुदायिक भागीदारी खत्म हो सकती है, जिसके बल पर ही यह प्रणाली विकसित हुई है और अभी तक चली आ रही है। अनेक किसानों ने समिति से शिकायत की कि उनकी जमीन के सामने बांध बन जाने से वे पहाड़ों से ढलकर आने वाले पानी का उपयोग भी नहीं कर पाते। यह मुद्दा आगे विवाद बढ़ा सकता है।

खड़ीन प्रणाली को व्यापक रूप से अपनाने को बढ़ावा देने के लिए, किसानों को प्रशिक्षण और इसके लाभों और उचित कार्यान्वयन के बारे में जानकारी प्रदान करना महत्वपूर्ण है। इसमें कार्यशालाएं, प्रशिक्षण कार्यक्रम और विस्तार सेवाएं शामिल हो सकती हैं जो किसानों को ज्ञान और कौशल प्रदान करती हैं जिनकी उन्हें अपनी भूमि पर इस प्रणाली को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए आवश्यकता होती है।

अंत में, खड़ीन कृषि प्रणाली एक पारंपरिक तकनीक है जो जल संरक्षण, मिट्टी की उर्वरता में सुधार और फसल की उपज बढ़ाने के लिए सिद्ध हुई है। हालांकि, ज्ञान और प्रशिक्षण की कमी इसके व्यापक प्रसार को अपनाने में बाधा बन रही है। इसके उपयोग को बढ़ाने के लिए किसानों को खड़ीन प्रणाली पर प्रशिक्षण और जानकारी प्रदान की जानी चाहिए।